Reg. E /1260 / 2-7-2010 ISSN : 2278 - 4594

The Referred International Journal

Recent Thought

Vaicharik Pravaho

Year - 4 ISSUE - 2 OCT - 2015

શિક્ષણ : રંગ-તરંગ

SPECIAL ISSUE

One-Day National Seminar

on

"Prospects and Challenges of Contemporary Education"

organized by

Shree Somnath Education Society's

Smt. C. P. Choksi Arts & Shree P. L. Choksi Commerce College, Veraval

on date : 15-03-2015

National Seminar-2015 Choksi College Veraval

સંપાદક : ડૉ. રશ્મિ મહેતા

સહસંપાદક : : ડૉ. એ. એમ. ચોચા

Sr. No.	Title	Page No.
(89)	*'शिक्षण की तात्त्विक आधार शिलाएँ'*, प्रा. महेता शैलेश एन., डॉ. वी. आर. गोढाणीया बी. एड् कॉलेज, पोरबन्दर	187
(90)	आधुनिक शिक्षा और चुनौती : त्रिवेदी मयंक एन.	189
(91)	'वैश्विक आफत के सामने शिक्षण की भूमिका' : वाला अनिलभाई सोमजीभाई, श्री सोमनाथ संस्कृत युनिवर्सिटी वेरावल	191
(92)	''शिक्षक और संस्कृति'' : जोशी विधि प्रविणभाई, जी.के.एण्ड सी.के.बोसमीया आर्ट्स एण्ड कोमर्स कॉलेज-जेतपुर	193
(93)	आचार्य पाणिनि एवं उनकी शिक्षा : प्रो. विनोकुमार झा, श्री सोमनाथ संस्कृत युनिवर्सिटी, वेरावल, गीर-सोमनाथ (गजरात)	194
(94)	नई शिक्षा नीति : विसावडीया हर्षा जीवनभाई	196
(95)	मूल्य आधारित शिक्षण : झणकाट रिद्धिबहन भूपतसिंह	198
(96)	વર્તમાન સમયની માંગ:પર્યાવરણનું શિક્ષણ : ડો.ઊર્મિલાબેન પટેલ ડો.મયુર એસ જાની શ્રી દોશી આર્ટ્સ એન્ડ કોમર્સ કોલેજ,વાંકાનેર	201
(97)	ઉચ્ચ શિક્ષણમાં વિકાસમાં વૈદિક સાહિત્યનું યોગદાન : ડૉ.હરેન્દ્રકુમાર વી. ચૌધરી, શ્રીમતિ બી.વી.ધાણક આર્ટ્સ એન્ડ કોમર્સ કોલેજ, બગસરા.	204
(98)	મુલ્યો આધારિત શિક્ષણ : પ્રો. સોનીરાવ.એમ.ગાઈન, શ્રી યુ.કે.વાછાણી મહિલા કોલેજ, કેશોદ.	206

आचार्य पाणिनि एवं उनकी शिक्षा

प्रो. विनोदकुमार झा
श्री सोमनाथ संस्कृत युनिवर्सिटी, वेरावल, गीर-सोमनाथ (गजरात)

महर्षि पाणिनि शिक्षा के परम प्रेमी एवं यावज्जीवन शिक्षापरायण ही रहे । उनकी पाणिनीय शिक्षा तो प्रसिद्ध ही है, जो स्वर तथा उच्चारण के लिये पूर्ण मार्गदर्शिका है । उन्होंने लौकिक-वैदिक सभी प्रकार के शिक्षाओं पर विचार किया है । अतः यहाँ उनपर एक स्वतन्त्र प्रबन्ध प्रस्तुत है ।

पाणिनि के अनुसार 'शिक्षा' शब्द की अनेक व्युत्पत्तियाँ है । उन्होंने मानो शिक्षा को ही परब्रह्म मान रखा था । उनके धातुपाठ में भी 'शिक्ष' धातुएँ दी गयी हैं ।

पाणिनि के समय में शिक्षाकाल ब्रह्मचर्य कहलाता था - 'तदस्य ब्रह्मचर्यम्' (पा. ५।१।९४) इसमें शास्त्रीय ब्रह्मचर्य के नियमों को पूर्णतया पालन करना पड़ता था । आचार्य - उपाध्यायादि से विद्यार्थी-शिक्षार्थी का सम्बन्ध विद्यासम्बन्ध कहलाता था । **विद्यासम्बन्धेभ्यस्तावद् उपाध्यायादागतम् औपाध्यायकम् आचार्यादागतम् आचार्यकम्, शिष्यादागतं शैष्यकम् (४।३।७७ काशिका)'** । इस प्रकार इस सम्बन्ध से प्राप्त पदार्थ-ज्ञान शिक्षादि में 'वुरूण्' (अक्) प्रत्यय का प्रयोग होता था । शिष्य का गुरुपसदन - गुरु के पास शिक्षार्थ जाना 'आचार्यकरण' कहलाता था और उपनयन भी (पाणि. १।३।३६) । शिष्यों के मानव और अन्तेवासि दो भेद थे । उन्हें दण्ड रखना पडता था - 'दण्डप्रधाना मानवाः ।' पतञ्जलि के अनुसार वेद में अपवृत् छात्र मानव कहलाता था ।

शिक्षार्थी अपनी विशेषता के अनुसार शिष्य, छात्र, विद्यार्थी तथा अन्तेवासी के नाम से व्यक्त होता था । शासन करने योग्य को 'शिष्य' कहते थे । अनुशासन-प्रियता इस का विशेष धर्म होता था । अध्ययनकाल में पूर्ण अनुशासित होकर वह सामाजिक जीवन में सफल होता था ।

गुरु के पास गुरुगृह में वास करने से अन्तेवासी कहलाना युं ही था (४।३।१३०) । 'चरणे ब्रह्मचारिणि' के अनुसार ये ग्रन्थरुप से ब्रह्मचारी ही कहे जाते थे । गुरु की छत्रवत् रक्षा करने से ये छात्र भी कहलाते थे (४।४।६२) **'छत्रादिभ्यो नः' 'छादनादावरणाच्छत्रम् । गुरुकार्येणावहितः छिद्रावरणप्रवृत्तश्छत्रशीलः शिष्यश्छात्रः ।'** (काशिका) । छात्रों को अजिन (मृगचर्म) एवं कमण्डलु सदा साथ रखना पडता था (द्र. सूत्र ४।१।७१ तथा ६।२।१९४)' विद्यार्थी उसे कहते थे जो गुरु को विद्या का धनी समझकर उन से विनम्रतापूर्वक विद्या की याचना करता था । विद्या का लाभ ही उसका मुख्य प्रयोजन होता था । विद्या के प्रति उत्कट अनुराग और गुरु के प्रति शुरुषाभाव विद्यार्थी शब्द के अर्थ से सूचित होता है ।

आचार्य धर्मार्थ शिक्षा देते थे । आचार्य शिष्यो में आचार अर्थात् चरित्र का निर्माण करते थे, शास्त्र के रहस्यों को खोलते थे और शिष्यों की बुद्धि को विकसित करते थे । शिष्यों का उपनयन-संस्कार कर उन्हें कल्प और रहस्य के साथ वेदादि की शिक्षा देते थे । आचार्य की यही कामना रहती थी कि उनका शिष्य विद्वान् बनकर मनस्वी और यशस्वी हो तथा शिष्य-परम्परा को सुदृढ़करे ।

योग्य शिक्षक उन दिनों अनूचान (३।४।६८) और प्रवचनीय कहलाते थे (३।२।१०६) । वे दोनों प्रायः सदा उपस्थानीय (३।४।६८) एक साथ ही रहते थे । राजपुत्र, ऋषिजपुत्र, आचार्यपुत्र साथ-साथ शिक्षा प्राप्त करते थे (६।२।१३३) गुरुओं के आचार्य, उपाध्याय, प्रवक्ता, श्रोत्रिय, अध्यापक आदि भेद भी थे । अथर्ववेद का ११।५ वाँ पूरा सूत्र् आचार्य और ब्रह्मचारी के सम्बन्ध की महत्ता का ही प्रतिपादक है । अष्टाध्यायी में अयोग्य, उच्छृच्ल, अनवहित शिष्यों के लिये तीर्थकाल, जाल्म आदि शब्द प्रयक्त् हुए हैं (२।१।२६,४१ आदि) । भागवत में भी ऐसी बातें आयी हैं ।

आचार्य की शास्त्रों में अनेक व्युत्पत्तियाँ हैं । पाणिनि की परम्परावालोंने आचार्य शब्द की -

आचिनोति च शास्त्रार्थानाचारे स्थापयत्यपि ।
स्वायमाचरेत यस्मात् तस्मादचार्य ईष्यते ।।

- यह व्युत्पत्ति प्रदिष्ट हैं ।

आचार - चरित्रप्रधान होने के कारण, सदाचार के मुख्य शिक्षण के कारण उसे श्रद्धापूर्वक आचार्य कहते थे । एकदेश के - विद्या के एक प्रविभाग के अध्यापन करानेवाले को उपाध्याय भी कहते थे । उसे ही अध्यापक, प्रवक्ता आदि भी कहा गया है ।

श्रोत्रिय संस्कार, विद्या, अनुष्ठानादि के अनुभवादि से संयुक्त होते थे । पाणिनिने, शिक्षाशास्त्र तथा सभी शिक्षाओं का भी विस्तार से विचार किया है । उन्हें ज्योतिष भी पूरा ज्ञात था - **'कालारूप्' 'नक्षत्रेण युंः कालः ।'** साथ ही उसका अनेक ग्रन्थो में भी उल्लेख किया है, अनेक श्रेष्ठ विद्वानों की भी चर्चा की है । उसकी पूरी जानकारी के लिये समग्र ग्रन्थ का अवलोकन आवश्यक है । इसमें काशिका, जिनेन्द्रबुद्धि, हरदत्त, पतञ्जलि, कैय्यट तथा वर्धमान आदि की व्याख्याएँ भी परम सहायक है ।